Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.shisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2025 SHISRRJ | Volume 8 | Issue 1
ISSN : 2581-6306
doi : https://doi.org/10.32628/SHISRRJ

पुराणों का उद्देश्य एवं महत्व

डा0 अराधना उपाध्याय
पूर्व शोध छात्रा, संस्कृत विभाग, महन्थ रामाश्रयदास स्नाकोत्तर महाविद्यालय, भुड़कुड़ा, गाजीपुर, उत्तर प्रदेश।

Article Info

Accepted : 02 Jan 2025
Published : 15 Jan 2025

Publication Issue :
January-February-2025
Volume 8, Issue 1

Page Number : 209-213

शोधसारांश–विभिन्न पुराणों में विभिन्न देवों की महत्ता का ज्ञापन और उनके गुणों का कथन विस्तारपूर्वक हुआ है तथापि विशेष रूप से तथा प्राथकि रूप से किस देव का महिमा वर्णन हुआ, इस सम्बन्ध में डॉ0 हरवंशलाल शर्मा लिखते हैं कि ''इन पुराणों के सूक्ष्म विवेचन और अध्ययन से पता चलता है कि पहले शिव की उपासना का ही विशेष महत्व रहा है। धीरे–धीरे विष्णु और शिव में साम्य स्थापित हुआ और फिर विष्णु को महत्व प्रदान किया गया। चारों पुराणों में विष्णु के साथ–साथ महादेव की भी विशेषता बतायी गयी है। इन पुराणों में लक्ष्य करने की एक और बात यह है कि ''शैवपुराण'' शिव को, ''विष्णुपुराण'' विष्णु को, ''शाक्तपुराण'' शक्ति को तथा ''सौरपुराण'' सूर्य को अन्य देवताओं का सृष्टा मानते हैं। ब्रह्मा के अतिरिक्त अन्य पाँच देवताओं– विष्णु, शिव, सूर्य, गणेश, शक्ति का महत्व प्राचीन–परम्परा से चला आया है और आज भी धार्मिक गीतों में हमें उनका उल्लेख साथ–साथ मिलता है।''

मुख्य शब्द– पुराण, देवता, शक्ति, सौरपुराण, शैवपुराण, संस्कृति, पुरूषार्थ।

'पुराण' भारतीय संस्कृति के गौरवपूर्ण ग्रन्थ है। विश्वप्रसिद्ध संस्कृत–साहित्यकाश में वैदिक वाङ्मय जहाँ अपने उच्चतम ज्ञान की प्रकाश से सम्पूर्ण विश्व को चकाचौध कर रहा है वहाँ पुराण–साहित्य की भूमिका कम महत्वपूर्ण नहीं है। पुराण वाङ्मय भी अपने स्नेहिल एवं आनन्ददायक प्रभा से सम्पूर्ण लोकों के जीवन को कलि–कल्मष शून्य पवित्र एवं भक्तिमय बनाकर धर्म, अर्थ, काम, मोक्षादि पुरूषार्थों को सिद्ध कराकर आध्यात्मिक, आधिदैविक व आदिभौतिक तापत्रयों से मुक्त कर परब्रह्म परमात्मा में विलीन कर देने वाला है।

पुराण हमारे जीवन को सात्विक बनाये वाले महत्वपूर्ण एवं वन्दनीय ग्रन्थ है। वेदों का उपबृंहण इतिहास, पुराण के द्वारा ही होती है। ''इतिहास पुराणभ्यां वेदं समुपवृंह्येत्''[1] सूक्ति प्रसिद्ध है। वेद जहाँ अपनी ओजस्विता एवं काठिन्यता से दुरूह बना हुआ है, वही पुराण उसकी काठिन्यता को परिभाषित एवं व्याख्यायित कर मानवों को मुक्तिमार्ग पर चलने के लिए निरन्तर प्रेरणा प्रदान करते हैं। अस्तु पुराण–साहित्य संस्कृत–साहित्य के रत्ननिर्मित अमूल्य श्रृंखला है तथा अतीत को वर्तमान के साथ जोड़ने वाली स्वर्णमयी श्रृंखला। विश्व–साहित्य के अक्षय भण्डार में अष्टादश पुराण अनुपम एवं सर्वश्रेष्ठ अष्टादश रत्न है। हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, आर्थिक और दार्शनिक जीवन को स्वच्छर्पण के समान प्रतिबिम्बित करते

Copyright © 2025 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)**

हैं और साथ ही सरलभाषा एवं क्रमबद्ध, कथानक शैली के कारण प्राचीन होते हुए भी नवीनतम स्फूर्ति संचारित करते रहते हैं।[2]

पं0 गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ने पुराणों की भूरि–भूरि प्रशंसा की है। वे इन्हें आर्य जातियों का सर्वस्व मानते हैं। वे कहते हैं कि पुराण आर्य जातियों के सर्वस्व है, ये आर्य–साहित्य के विस्तृत प्रसाद के आधारस्तम्भ है, प्राचीन इतिहास मन्दिर के स्वर्णिम कलश है, विविध विज्ञानरूप समुद्र में तैरने वाले जहाज के प्रकाशस्तम्भ है, सनातन धर्मरूप शामियानों की डोरिया है, मानव समाज के लिए संस्कृत पथ–प्रदर्शन करने वाले दिव्यप्रकाश रूप हैं इसे आर्य जातियों का अनादिकाल से सञ्चित विज्ञानों की मञ्जूषा कही जाये तो अतिशयोक्ति न होगी।[3]

पुराण–साहित्य अपनी सांस्कृति अर्थवत्ता के लिए जाने जाते हैं। भारतीय मनीषा का विशुद्ध विश्लेषण सर्वाशतः पुराणों में हुआ है। मानवीय आस्था से सम्पृक्त एवं सम्बद्ध होने के कारण देवी–देवताओं के गौरवगान एवं गुणानुवाद शुद्ध साहित्यिक एवं काव्यशास्त्रीय विधि–विधान से पुराणों में किया गया है।

पुराण–साहितय बहुत ही विशाल है। महर्षि वेदव्यास ने अट्ठारह महापुराण, अट्ठारह उपपुराण, अट्ठारह औपपुराण एवं अट्ठारह अपौपपुराणों की रचना की है, जिसमें बहुतायत पुराण अनुपलब्ध है। इस विशाल पुराणारण्य को विद्वान् लोग अपनी ज्ञानचक्षुओं के सहारे पार करते हैं। इन पुराणों में श्रीमद्भागवत महापुराण कुछ विशेष ही महत्व रखता है। महर्षि वेदव्यास को सन्तोष उस समय हुआ, जब उन्होंने अपने काव्यशास्त्रीय दृष्टिकोण से रसभाव समन्वित हो श्रीमद्भागवत महापुराण की रचना की।

श्रीमद्भागवत महापुराण में साहित्यिक एवं काव्यशास्त्रीय समस्त गुण वर्तमान है। भाषा, भाव, विचार शैली, रस, छन्द, अलङ्कार, गद्य, पद्य इत्यादि की दृष्टि से बहुत ही मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी है। इसीलिए श्रीमद्भागवत को मनीषी लोग मोक्ष एवं स्वान्त सुखाय को अभूतपूर्व ग्रन्थ मानते हैं। यही नहीं दुरूहता के कारण विद्वानों की समुचित परीक्षा श्रीमद्भागवत के अध्ययन एवं पठन–पाठन से होता है।

श्रीमद्भागवत महापुराण को जो अध्ययन पठन–पाठन, श्रवण इत्यादि नहीं करता उसके भाव भाषा शैली एवं कथा का रसपान नहीं करता, वह चाण्डाल एवं गधा कहा गया है। वह अपनी माता से जन्म लेकर माता को मात्र कष्ट देने वाला पृथ्वी का बोझ होता है। वह पापी, मृत जैसा पशुतुल्य है।

आजन्ममात्रमि येन शठेन किञ्चित्
चितं विधाय शुक शास्त्र कथा न पीता।
चाण्डलालवच्च खरवद् वत तेन नीतम्
मिथ्या स्वजन्म जननी जनि दुःखभाजा।।[4]
जीवच्छवो निगतिः स तु पापकर्मा
येन श्रृतं शुककथा वचनं न किञ्चित्।
धिक् त नरं पशु समं भुविभार रूपम्
एवं वदन्ति दिविदेव समाजमुख्या।।[5]

भाषा शैली की दृष्टि से श्रीमद्ीागवत बेजोड़ ग्रन्थ है। व्यास जी ने बड़े ओजस्वी और दबावदार भाषा में मूर्खों को समझाने का प्रयास किये हैं इसी प्रकार सैकड़ों स्थलों में भाषा का समुचित वर्चस्वता देखी जा सकती है। श्रीमद्भागवत रसामृत पान के लिए व्यासजी ने स्वतः बड़े ही मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी ढङ्ग से साहित्यिकों, भावुकों एवं भक्तों को समझाने का प्रयास किया है।

निगमकल्पतरोर्जलितं फलम्
शुकमुखादमृत द्रव संय्युतम्।
पिवत भागवतं रसमालयम्
मुहुरहो रसिकाः भुवि भावुकाः।।[6]

इसीलिए कहा जाता है कि पुराण साहित्य भारतीय वाङ्मय का महत्वपूर्ण अङ्ग है और श्रीमद्भागवत उस अङ्ग विशेष की शोभावर्धक वह दिव्य आभरण है जिससे भाषा का लालित्य और श्री की ही नहीं अपितु आकर्षण की दिव्य भावरत्नों की अनुपम छटा विकीर्ण होती है।

पाश्चात्य विद्वान वेदों के समान ही पुराणों को सत्रहवीं–अटठारहवीं शताब्दी की कृति स्वीकार करते हैं। भारतीय विद्वान पुराणों की स्थिति वैदिककाल में स्वीकार करते हैं। पौराणिक साहित्य के मूर्धन्य विद्वान शास्त्रार्थ महारथी श्री पं0 माधवाचार्य जी शास्त्री ने उक्त कथन के समर्थन में पर्याप्त सामग्री 'पुराण–दिग्दर्शन' में सङ्कलित की है। इसके साथ ही ''ऋचः सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह, (अथर्ववेद, 71.7.24), अध्वर्युपुराणों का कीर्तन करते रहते हैं।[7] महत्त्व के विश्वास के रूप में वेद, पुराणादि का निस्सरण,[8] आदि उक्तियाँ पुराणों की प्राचीनता के समर्थन में उद्धत की जा सकती है। पुराणों में पुराण के पाँच लक्षण बताये गये हैं –

1. सर्ग–सृष्टि विज्ञान 2. प्रतिसर्ग–सृष्टि–विकास–लय तथा पुनः सृष्टि 3. वंश–सृष्टि की वंशावली 4. मन्वन्तर 5. वंशानुचरित–विशिष्ट वंशों का इतिवृत्ति।[9]

श्रीमद्भावगत में पुराण लक्षण की मार्यादा का अतिक्रमण कर सर्ग–विसर्ग आदिर दस विषयों का विवेचन हुआ है और इससे उसकी महत्ता की अभिवृद्धि ही हुई है। पुराणों की संख्या अष्टादश स्वीकार की गयी है। सभी पुराणेां में प्रायः एक ही विषय का ज्ञापन, प्रधान प्रतिपाद्य विषय के साथ हुआ है। पुराणेां का मुख्य विषय सम्प्रदाय प्रचार ही प्रतीत होता है, जैसा कि उनके नामों से ही विदित हो जाता है। सम्प्रदज्ञाय साहितय होने के कारण ही सम्भवतः परिवर्तन–परिवर्द्धन होते हैं। इतना सब कुछ होते हुए भी हम इन्हें विशुद्ध साम्प्रदायिक एवं सङकीर्ण मनोवृत्ति का परिचायक नहीं कह सकते, क्यांकि प्रत्येक पुराण में अपने प्रतिपाद्य स्वरूप (भगवान) और विषय के समक्ष अन्य देवों और विषयों की अवहेलना भी नहीं की गयी है और सबकी चर्चा सभी में उपलब्ध होती है। अष्टादश पुराणों के समान अष्टादश उप पुराण[10] और अष्टादश की औपपुराण भरी हे।''[11] 1030 ई0 में भारत में पधारने वाले ''उललेरूनी'' ने अपने भ्रमण वृत्तान्त में इन उप और औप एवं अपौप पुराणों का उल्लेख किया है। अल्बेरूनी के वृत्तान्त में आदित्य और नन्दा, जो नन्दिकेश्वर का अपभ्रंश प्रतीत होता है। उसमें औप पुराणों का भी उल्लेख मिलता है, अतः निर्विवाद ही ये ग्रन्थ भी प्राचीन ही है, अर्वाचीन नहीं। हिन्दू पुराणों के आधार पर अनेक जैन और बौद्ध पुराणेां की भी रचना हुईं जैन अपने पुराणों को हिन्दू पुराणों से प्राचीन मानते हैं, पर यह सङ्गत नहीं, क्योंकि बौद्ध और जेन पुराणों में शिव, ब्रह्मादिक का उल्लेख है। जैनों के 24 और बौद्धों के 9 पुराण प्रसिद्ध है।''[12]

वेदों के सभी भाष्यकारों के मतानुसार वेदों में मुख्यतः तीन ही विषयों का प्रतिपादन हुआ है – कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड और उपासनाकाण्ड। वेदों के कतिपय प्रसिद्ध विद्वान वेदों में सगुणोपासना विधि का अभाव सिद्ध करते हैं डॉ0 राधाकृष्णन् ने भी अपने ''ब्रह्मसूत्र'' की अंग्रेजी विवेचना में मूर्ति–पूजा का अभाव ही वेदों में दर्शाया है तथापि श्री पं0 माधवाचार्य जी आदि विद्वान् मूर्ति–पूजा का स्रोत 'वेदों' को ही मानते हैं। तथ्य जो भी हो, इतना निश्चित है कि अवतारवाद पुराणों का एक अनिवार्य अङ्ग बन गया है और सभी पुराणों में ब्रह्मा के नानारूपों की कल्पना करके उनके अवतारों की चर्चा की गयी है। इन्हीं अवतारों की

कथा और माहात्म्य का प्रतिपादन ही पुराणों का प्रधान विषय है। यहय सब कुछ होते हुए भी उन सभी के स्रोत किसी–न–किसी रूप में ''वैदिक–साहित्य'' में मिल जाते हैं। इसके अतिरिक्त भागवत–धर्म के विकास पर दृष्टिपात करने से भी विदित होता है कि किस प्रकार वैदिककाल में ही एक देवता का उत्कर्ष तथा दूसरे का अपकर्ष होता गया। पुराणोक्त अनेक अवतारों का नामोल्लेख किसी–न–किसी रूप में वैदिक साहित्य में अनेक स्थलों पर हुआ है। ''ऋग्वेद'' में अनेक सूक्त विष्णु महिमा के मंत्रों से युक्त हैं तथा शिव के ''रूद्र'' नाम का भी उसमें उल्लेख है। यजुर्वेद में तो रूद्र की पूर्ण स्तुति ही है। ''वाजसनेयि संहिता'' की 'शतरूद्री'' में शिव के अनेक नामों के उल्लेख के साथ ''शिवा'' और ''अम्बिका'' का भी उल्लेख हुआ।[13] ब्राह्मण ग्रन्थों में तो मत्स्य, वामन, कूर्म, कृष्णादि अवतारों का और भी स्पष्ट, उल्लेख है। शतपथ ब्राह्मण (1.8.1.2–10, 14. 1.2.11, 1.2.5.1–7 आदि) में मत्स्य, कूर्म, वराह और वामन का स्पष्ट निर्देश है। तैत्तिरीय संहिता (7.1.5.1) और तैत्तिरीय आरण्यक (10.1.6) में वासुदेव कृष्ण का वर्णन उपलब्ध होता है। उपनिषदों में भी अवतार विषयक उल्लेख प्राप्त होते हैं छान्दोग्योपनिषद् (3.17) में देवकलीनन्द कृण का उल्लेख है। ''ऋग्वेद'' अष्टम मण्डल तथा ''कौशीतकी ब्राह्मण'' में ''कृष्ण'' का नामोल्लेख हुआ है। ब्राह्मण–ग्रन्थों में कहीं–कहीं पुराणों की कथाओं का भी सक्षिप्त वर्णन प्रापत होता है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक–साहित्य में अवतारों का नामोल्लेख होने से वेदों को ही पौराणिक साहित्य का मूलस्रोत मानना चाहिए। पुराणों की अधिकांश कथाएं रूपक है और श्रुति–परम्परा से पुराणों में संगृहीत की गयी है, अतः उनमें कल्पना का योग स्वभावतः ही अधिक हो गया है। डॉ0 हरवंशलाल शर्मा का कथन है कि ''पुराणों'' में कहीं–कहीं पर ''पुराण–संहिता'' शब्द आया है, जिससे यह प्रतीत होता है कि सब पुराणों का संकलन एक पुराण–संहिता में रहा होगा। बाद में पृथक्करण के अवसर पर कल्पना का सहयोग विषय और कलेवर की वृद्धमर्थ आवश्यक रूप में लिया होगा।[14] श्री रामदास गौंड़ ने ''विष्णुपुराण'' के एक उदाहरण से इस बात को और अधिक स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। इसके बाद पुराण–तत्त्वज्ञ भगवान् वेदव्यास ने आख्यान, उपाख्यान, गाथा और कलप शुद्धि के साथ–साथ पुराण–संहिता की रचना की। लोमहर्षण नाम का व्यास का एक सूत जातीय शिष्य था, जिसे महामुनि ''व्यास'' ने पुराण–संहिता दी। लोमहर्षण के 6 शिष्य हुए – सुमति, अग्निवर्चा, मित्रयु, शांस्यायन, अकृतवर्ण और सावर्णि। शांस्यायन ने लोमहर्षण से पढ़कर मूल संहिता के आधार पर एक–एक पुराण–संहिता की रचना की, उन्हीं चार संहिताओं का सार लेकर यह पुराण–संहिता रची गयी है। पुराणों में ब्रह्मपुराण सबसे प्राचीन बताया जाता है। पुराणविदों ने पुराणों की संख्या अट्ठारह निर्दिष्ट की है।''[15]

आज के पूर्धन्य पौराणिक विद्वार भी पुराणेां की संख्या अष्टादश ही स्वीकार करते हैं। श्री पं0 माधवाचार्य शास्त्री ने अपने ''पुराण–दिग्दर्शन'' नामक शोधपूर्ण ग्रन्थ में पुराणों की संख्या, प्रक्षेपांश, लुप्तांश, पुराणों के पुराण, उपपुराण और पुराण आदि भेदों का उल्लेख कर पुराण विषयक अनेकानेक शङ्गओं के निरसन का सफल प्रयास किया है।

सभी पुराण प्रायः एक ही विषय को लेकर चले हैं, केवल उद्देश्य के भेद से ही उनमें भेद हो गया है। पुराणों का विषय विभिन्न देवताओं का गुणगान है। ''स्कन्दपुराण'' के अनुसार दस पुराण शैव है, चार ब्राह्म, दो शाक्त और दो वैष्णव है।[16] शैव पुराणों के अन्तर्गत शिव, भविष्य, कार्मण्डेय, लिंग, वाराह, स्कन्द, कौर्म, वामन और ब्रह्माण्ड ये दस माने गये हैं। विष्णु, नारदीय, गरूड़ और भागवत चार वैष्णव पुराणान्तर्गत है। ब्रह्म और पद्म ब्राह्मपुराण है तथा 'अग्नि' और 'ब्रह्मवैवर्त' दो शाक्त पुराण हैं, क्योंकि इनमें क्रमशः अग्नि और सूर्य जैसी दिव्य शक्तियों की महिमा का ज्ञापन हुआ है।[17] यद्यपि विभिन्न पुराणों में विभिन्न देवों की

महत्ता का ज्ञापन और उनके गुणों का कथन विस्तारपूर्वक हुआ है तथापि विशेष रूप से तथा प्राथकि रूप से किस देव का महिमा वर्णन हुआ, इस सम्बन्ध में डॉ0 हरवंशलाल शर्मा लिखते हैं कि ''इन पुराणों के सूक्ष्म विवेचन और अध्ययन से पता चलता है कि पहले शिव की उपासना का ही विशेष महत्व रहा है। धीरे–धीरे विष्णु और शिव में साम्य स्थापित हुआ और फिर विष्णु को महत्व प्रदान किया गया। चारों पुराणों में विष्णु के साथ–साथ महादेव की भी विशेषता बतायी गयी है। इन पुराणों में लक्ष्य करने की एक और बात यह है कि ''शैवपुराण'' शिव को, ''विष्णुपुराण'' विष्णु को, ''शाक्तपुराण'' शक्ति को तथा ''सौरपुराण'' सूर्य को अन्य देवताओं का सृष्टा मानते हैं। ब्रह्मा के अतिरिक्त अन्य पाँच देवताओं– विष्णु, शिव, सूर्य, गणेश, शक्ति का महत्व प्राचीन–परम्परा से चला आया है और आज भी धार्मिक गीतों में हमें उनका उल्लेख साथ–साथ मिलता है।''

सन्दर्भग्रन्थ–

1. महाभारत,
2. विष्णुपुरण का भारत, डॉ0 सर्वानन्द पाठक,
3. पुराण परिशीलन, पं0 गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी
4.श्रीमद्भागवत माहात्म्य, 3.42
5.तदेव, 3.43
6.श्रीमद्भागवत माहात्म्य, 6.80
7.शतपथ ब्राह्मण, 10.4.3.112
8.बृहदारण्यक, 2.4.10
9.सर्गश्व प्रतिसर्गश्व वंशो मन्वन्तराणि च। वंशानुचरितं चेति पुराणं पंचलक्षणम् ।। शुक्रनीति, अ. 4, पृ0 264 तथा 93–94
10.आद्यं सनत्कुमारोक्तं नारसिंहमथापरम्।
तृतीयं स्कान्दमुद्दिष्टं कमारेणु भाषितम्।।
कपिलं वामनं चैव तथौवोषनसेरितम्।
ब्रह्माण्डं वारूणं चाथ कालिकाह्वयमेव चं।।
माहेश्वरं तथा साम्बं सौरं सर्वार्थ संचयम्।।
पराषरोक्तमपरं मारीचं भास्कराह्वयम्।। वृहद्विवेक, 3.1–4
11.आद्यं सनत्कुमारं च नारदीयं बृहच्च यत्।
आदित्यं मानव प्रोक्तं नन्दिकेश्वर मेव च।।
कौर्म्य भागवतं श्रेयं वाशिष्ठं भार्गवं तथा।
मुद्गलं कल्कि दैवयौ च महाभागवतं तथा।
वहद्धर्मं परानन्दं बह्नि पशुपतिं तथा।।
हरिवंश ततो ज्ञेयमिदमौप पुरायणकम्।। बृहद्विवेक, 3.37–39
12. पुराण दिग्दर्शन, अध्याय 1, पृ0 55
13. वाजसनेयी संहिता, 3.67, 16.1
14. सूर और उनका साहित्य, पृ0 111
15. हिन्दुत्व, पृ0 168
16. स्कन्दपुराण, प्रथम अध्याय, केदारखण्ड
17. तदेव, सम्भवकाण्ड, 2.30–39